इराक-सीरिया व इस्लामिक स्टेट

साम्राज्यवादियों द्वारा किये जा रहे हस्तक्षेप से इराक, सीरिया व लीबिया क्षत विक्षत हो चुके हैं। आज जहां एक ओर साम्राज्यवादियों के 'आतंक के खिलाफ युद्ध' में इस्तेमाल किया जाने वाला नया मोहरा इस्लामिक स्टेट इराक-सीरिया में बर्बरता बरपा कर रहा है वहीं दूसरी ओर पश्चिमी साम्राज्यवादी और अरब की शेखशाहियां अपनी इस नाजायज संतान से निपटना तो चाहते हैं पर कुछ इस तरीके से कि सीरिया में उनका नियंत्रण भी कायम हो जाये। वहीं लीबिया में गद्दाफी की हत्या करने के बावजूद साम्राज्यवादी वहां अपने मन की नहीं कर पा रहे हैं। सत्ता के लिए संघर्ष ने वहां गृहयुद्ध का रूप धारण कर लिया है।

साम्राज्यवादी इन देशों की तेल व गैस सम्पदा पर अपनी गिद्ध दृष्टि जमाये बैठे हैं। साम्राज्यवादियों के बीच बढ़ती प्रतिस्पर्धा इन देशों को और तबाही की ओर धकेल रही है। तरह-तरह के इस्लामिक कट्टरपंथी व घरेलू देशी शासक भी जनता के जीवन को बदतर बनाने में पीछे नहीं हैं। वैसे तो समूचा अरब जगत ही साम्राज्यवादी हस्तक्षेप व इस्लामिक कट्टरपंथ के कम या ज्यादा प्रभाव में है पर यहां हम सैन्य हस्तक्षेप से क्षत विक्षत हुए देशों इराक व सीरिया पर ही अपना ध्यान केन्द्रित करेंगे।

(1) इराक

एक लम्बे समय से गृहयुद्ध का शिकार इराक आज विभाजन के कगार पर है। इसके एक हिस्से में इस समय इस्लामिक स्टेट के लड़ाकों ने कब्जा जमा रखा है तो दूसरे हिस्से में अमेरिका द्वारा रोपे गये लोकतंत्र की सरकार है। इस सरकार के तले भी कुर्द लोगों का कुर्द बहुसंख्या वाले इराक पर लगभग स्वायत्त नियंत्रण है जिसका केन्द्रीय सरकार से खास लेना देना नहीं है। इस्लामिक स्टेट ऑफ सीरिया एण्ड इराक (ISIS) अपने कब्जे वाले इलाके से तेल बेचकर न केवल अपनी आर्थिक स्थिति मजबूत बनाये हुए है बल्कि इसके नेता अबु बकर अल बगदादी ने खुद को इस्लामी दुनिया का खलीफा घोषित कर दिया है।

अरब जगत के अधिकतर देश जहां सुन्नी बहुल देश हैं वहीं केवल इराक व बहरीन ही शिया बहुल देश हैं। धर्म के आधार पर इराक में 97% आबादी मुस्लिम है व शेष 3% आबादी ईसाई व अन्य लोगों की है। मुस्लिम आबादी का 60-65% शिया व शेष सुन्नी हैं। जनजातीय आधार पर कुल आबादी का 75-80% अरब लोगों, 15-20% कुर्द लोगों का व 5% तुर्क व अन्य लोगों से मिलकर बना है। यह एक तेल समृद्ध देश है। इसकी अर्थव्यवस्था में पेट्रोलियम निर्यात से प्राप्त आय अच्छा खासा हिस्सा रखती है। पेट्रोलियम के भंडार के मामले में इसका दुनिया में 5वां स्थान है। इस तेल सम्पदा पर नियंत्रण ही इसके साम्राज्यवादी हस्तक्षेप से भरे इतिहास में साम्राज्यवादियों के लिए प्रमुख प्रेरक तत्व रहा है।

प्रथम विश्व युद्ध के पूर्व तक इराक तुर्की के ऑटोमन साम्राज्य का हिस्सा रहा था। प्रथम विश्व युद्ध में तुर्की की पराजय के साथ ही ऑटोमन साम्राज्य बिखर गया। इस युद्ध के विजयी दो प्रमुख साम्राज्यवादी देशों फ्रांस व ब्रिटेन ने तुर्की के आधिपत्य वाले देशों का आपस में बंटवारा कर लिया। इस बंटवारे में ब्रिटन को इराक, फिलिस्तीन व जॉर्डन मिले तो फ्रांस को लेबनान व सीरिया पर नियंत्रण हासिल हुआ। इस तरह इराक ब्रिटेन का उपनिवेश बन गया।

इराक में तेल भण्डारों की खोज ने साम्राज्यवादियों की निगाहों में इराक के महत्व को बढ़ा दिया था। पहले तुर्की पेट्रोलियम कंपनी (स्थापना 1912) व बाद में इसकी जगह बनी इराकी पैट्रोलियम कंपनी (स्थापना 1929) के जरिये साम्राज्यवादियों ने शुरुआत से ही इस तेल सम्पदा पर अपना नियंत्रण कायम रखा। इराकी पैट्रोलियम कंपनी में ब्रिटेन, फ्रांस, नीदरलैण्ड व अमेरिका की बराबर की हिस्सेदारी थी।

ब्रिटिश साम्राज्यवादियों ने 1925 में इराक को संवैधानिक राजतंत्र बना दिया और 1932 में इसकी आजादी की औपचारिक घोषणा भी कर दी पर वास्तव में वास्तविक कब्जा ब्रिटिश साम्राज्यवादियों का ही बना रहा। इराकी जनता लगातार इस कब्जे के खिलाफ संघर्षरत रही। ब्रिटिश कब्जे से मुक्ति इराकी जनता को द्वितीय विश्व युद्ध के बाद पूरी दुनिया में जारी राष्ट्रीय मुक्ति लहर के दौरान ही हासिल हो पाई। 1958 में फौजी अफसर कासिम के नेतृत्व में हुई "इराकी क्रांति" के जरिये राजा फैसल की हत्या कर दी गयी और इराक में राजतंत्र की समाप्ति व गणतंत्र की स्थापना की घोषणा कर दी गयी। कासिम ने न केवल 1955 में अमेरिका के नेतृत्व में कायम हुए अरब राष्ट्रवाद व समाजवाद विरोधी सेण्टो से इराक को बाहर घोषित कर दिया बल्कि साम्राज्यवादियों की इराकी पैट्रोलियम कंपनी का दोहन क्षेत्र महज 0.5% तक सीमित कर दिया व शेष क्षेत्र सरकारी तेल कंपनी इराक नेशनल ऑयल कम्पनी के लिए सुरक्षित कर दिया।

1963-68 की उठापटक की प्रक्रिया में अमेरिकी साम्राज्यवादियों के समर्थन व सहयोग से अन्ततः सत्ता पर बाथ पार्टी ने नियंत्रण हासिल कर लिया। पर सत्तासीन हुए बाथ पार्टी के अल् बकर ने सोवियत-अमेरिकी साम्राज्यवादी प्रतिद्वन्द्विता का लाभ उठाने के लिए सोवियत संघ से मैत्री संधि के साथ 1972 में इराकी पेट्रोलियम कंपनी का राष्ट्रीयकरण कर दिया जिसके एवज में भागीदार विदेशी कंपनियों को मुआवजा दिया गया। 1979 में अल् बकर के इस्तीफे के बाद सद्दाम हुसैन राष्ट्रपति बना।

1980 में जब ईराक ने इरान पर हमला बोला तो सद्दाम हुसैन के इस कदम का अमेरिकी साम्राज्यवादियों ने खुला समर्थन किया। इसी के बाद से सद्दाम के अमेरिका के साथ सम्बन्ध क्रमशः सुधरते चले गये। अमेरिका ने ही सद्दाम हुसैन को वो जनसंहारक हथियार दिये जिनका इस्तेमाल सद्दाम ने ईरान के खिलाफ किया। इस 8 साला युद्ध की समाप्ति तक इराक व ईरान दोनों खासे कमजोर हो चुके थे। इराक खासा ऋणग्रस्त हो चुका था। इराक कुवैत पर इस आधार पर पहले से अपना दावा करता रहा था कि ऑटोमन साम्राज्य में कुवैत बसरा विलायत का हिस्सा था। अब अगस्त 1990 में इराक ने इसी दावे को दोहराते हुए कुवैत की तेल सम्पदा पर कब्जे के उद्देश्य से कुवैत पर हमला बोल दिया।

इराक द्वारा कुवैत पर हमले को अमेरिकी साम्राज्यवादियों ने अपने हस्तक्षेप के लिए सुनहरे मौके के रूप में इस्तेमाल किया। कुवैत की मुक्ति के नाम पर जनवरी 1991 में अमेरिका व ब्रिटेन के नेतृत्व में सहयोगी सेनाओं ने इराक पर हमला बोल दिया। अन्ततः सद्दाम हुसैन को कुवैत से कदम पीछे खींचने पड़े। इराक ने यद्यपि संयुक्त राष्ट्र संघ का प्रस्ताव स्वीकार कर लिया पर अमेरिकी-ब्रिटिश साम्राज्यवादियों ने न केवल अपनी सेनाएं इस इलाके में बनाये रखीं बल्कि इराक के एक बड़े हिस्से को नो फ्लाई जोन घोषित कर इराक के अन्दरूनी मामले में हस्तक्षेप भी जारी रखा। युद्ध के दौरान पैदा हुई तबाही के साथ इराक पर लगे प्रतिबन्धों ने इराक को बुरी तरह क्षतविक्षत कर डाला। 1991 से 2003 के बीच साम्राज्यवादी इराक पर जब-तब बमबारी भी करते रहे।

2000 में अमेरिकी बहुराष्ट्रीय तेल कम्पनियों के समर्थन से जॉर्ज बुश अमेरिका का राष्ट्रपति चुना गया। इन तेल कम्पनियों की तेल पर कब्जे की चाहत को पूरा करने के लिए उसने आक्रामक नीति अपनायी। सितम्बर 2001 को न्यूयार्क व पेण्टागन पर हुए हमलों को बहाने के रूप में इस्तेमाल करते हुए पहले अफगानिस्तान व 2003 में इराक पर हमला बोल दिया। इराक पर हमले के लिए बुश ने इराक पर जनसंहारक हथियार होने की बातों को बहाना बनाया। यद्यपि इन हथियारों को 1991-2003 के बीच संयुक्त राष्ट्र संघ के निरीक्षक नहीं ढूंढ़ पाये थे। अप्रैल 2003 आते-आते इराक में सद्दाम हुसैन की सत्ता का पतन हो गया और अमेरिकी-ब्रिटिश फौजों ने इराक पर कब्जा कर लिया।

15 अप्रैल 2003 को अमेरिका ने जनरल जे गार्नर को इराक में नयी सरकार के गठन तक सत्ता संचालन की जिम्मेदारी सौंपी। पर एक माह से भी कम समय में गार्नर को खास सफलता न मिलती देख अमेरिका ने गार्नर को हटा एक नागरिक प्रशासक के बतौर पाउल ब्रेमर को नियुक्त कर दिया जो कि एक कूटनीतिज्ञ व अमेरिका में आतंकवाद विरोधी विभाग का प्रमुख था। अमेरिकी कब्जे के बावजूद इराकी हथियारबंद विद्रोही लगातार अमेरिकी सैनिकों को अपना निशाना बनाना जारी रखे हुए थे। इससे निपटने के लिए जून 2003 में अमेरिकी-ब्रिटिश सेनाओं ने ऑपरेशन डेजर्ट स्कॉर्पियन नामक सैन्य अभियान शुरू किया।

13 जुलाई 2003 को अमेरिकी-ब्रिटिश अधिकारियों ने 25 सदस्यीय अंतरिम गवर्निंग काउन्सिल का गठन किया। काउंसिल के पास मंत्रियों को नियुक्त करने व नया संविधान बनाने में मदद करने का कार्यभार था हालांकि सर्वोच्च अधिकार पाउल ब्रेमर के पास बना रहा। अक्टूबर 2003 में संयुक्त राष्ट्र में इराक के पुनर्निमाण के लिए अमेरिका के नेतृत्व में अंतर्राष्ट्रीय सेना भेजने का प्रस्ताव पारित हुआ। मैड्रिड में 80 देशों की अंतर्राष्ट्रीय डोनर कांफ्रेंस में इराक के पुनर्निर्माण के लिए 13 अरब डॉलर की धनराशि जुटायी गयी। दिसम्बर 2003 में अमेरिका ने इराक के पुननिर्माण में फ्रांस, जर्मनी, कनाडा, मैक्सिको, चीन व रूस द्वारा ठेके लिए जाने पर रोक लगा दी। दिसम्बर 2003 में ही सद्दाम हुसैन को गिरफ्तार कर लिया गया।

अमेरिका-ब्रिटेन द्वारा इराक पर कब्जे के पश्चात सद्दाम की बॉथ पार्टी से जुड़े लोगों को राज्य के काम से अलग कर दिया गया था। सद्दाम की इराकी सेना को भंग कर दिया गया था। बॉथ पार्टी का आधार इराक में अल्पसंख्यक सुन्नी लोगों के बीच था। इस तरह साम्राज्यवादी कब्जे से जहां सुन्नी आबादी में दहशत पैदा हुई वहीं बहुसंख्यक शिया लोगों में इस बात की उम्मीद जगी कि उन्हें नयी सत्ता में अपेक्षित भागीदारी मिलेगी। इसके साथ ही कुर्द लोगों में अलग कुर्दिस्तान के कायम होने की भी उम्मीद पैदा हुई।

परन्तु अमेरिकी साम्राज्यवादी जिस नीति पर आगे बढ़े उससे न तो शिया आबादी के सम्पन्न हिस्से के हित सधे और न ही कुर्द आबादी के। पाउल ब्रेमर ने इराक को अपना उपनिवेश बना वहां नवउदारवादी सुधार शुरू कर दिये। इसके लिए तेल उद्योग के निजीकरण की ओर बढ़ा गया। बॉथ पार्टी के सुन्नी लोगों पर अधिकाधिक हमला बोलने के साथ चुनाव प्रक्रिया को लगातार टाल कर सत्ता में भागीदारी की आस लगाये शियाओं को भी निराश किया गया। अपने नाटो के सहयोगी तुर्की के विभाजन के खतरे से बचने के लिए अलग कुर्दिस्तान की मांग को भी अमेरिकी साम्राज्यवादियों ने नकार दिया।

जनवरी 2004 में शिया लोगों ने तत्काल चुनाव कराये जाने की मांग को लेकर बड़े-बड़े प्रदर्शन इराक में आयोजित किये। जनवरी 2004 में ही अमेरिकी निरीक्षणकर्ताओं ने अंतिम तौर कोई जन संहारक हथियार न मिलने की घोषणा की। अमेरिकी राष्ट्रपति बुश को चौतरफा दबाव के बीच अपनी खुफिया एजेंसियों की विफलता की जांच के लिए एक अलग आयोग का गठन करना पड़ा।

फरवरी 2004 में संयुक्त राष्ट्र संघ ने लखदर ब्राहिमी (Lakhdar Brahimi) के नेतृत्व में इराक में प्रत्यक्ष चुनाव कराये जाने की संभावनाओं के आकलन के लिए एक मिशन भेजा जिसने रिपोर्ट में यह कहा कि 2004 के अंत तक या 2005 के शुरुआत तक चुनाव कराना संभव नहीं है पर 30 जून 2004 की तय समय सीमा तक किसी भी अन्य उपाय से सत्ता इराकी लोगों को सौंप दी जानी चाहिए। इसके लिए ब्राहिमी ने अस्थाई सरकार के गठन की बात कही।

अमेरिकी साम्राज्यवादियों के इराक को न छोड़ने की नीति के उजागर होने का परिणाम इराकी जनता के अधिकाधिक साम्राज्यवादी कब्जे के खिलाफ उठ खड़े होने के रूप में सामने आया। मौसुल व तिकरित शहरों में सद्दाम के सहयोगी इज्जत इब्राहीम अल नूरी के नेतृत्व में प्रतिरोध करने वाली नक्शबन्दी सेना खड़ी हो गयी। सद्दाम की इराकी सेना व बाथ पार्टी के तमाम लोग इसकी

ओर आकृष्ट हुए। कुछ ही समय में सुन्नी आबादी के कुछ और जेहादी संगठन खड़े होने लगे। अल-अन्सार- अल-इस्लाम, असीबहल अल-इराक, अल-जैश-अल-इस्लामिफिल-इराक, जैश-अल- मुजाहिदीन, जमात अल अन्सार अल-सुन्ना आदि इनमें प्रमुख थे। ये संगठन सलाफी राष्ट्रवाद से लेकर इस्लामी बॉथवादी सोच के थे। जो अमेरिकी कब्जे के खिलाफ जेहाद से प्रेरित थे।

अमेरिकी सेना ने इन सबका दमन करने की नीति अपनाई। इसी दौर में अबु गरीब की जेलें भीषण यातना गृह में तब्दील कर दी गयीं। जहां एक ओर अमेरिकी साम्राज्यवादी इन संगठनों को कुचल रहे थे वहीं वे शियाओं की चुनाव कराने की मांग पर भी कोई ध्यान नहीं दे रहे थे यहां तक कि अमेरिकी सेनायें उनका भी दमन करने में जुट गयीं। मार्च 2004 में शिया नेता मुक्तदा अल सद्र के अमेरिका विरोधी अखबार अल हवाज को जबरन बंद करा दिया गया। 31 मार्च 2004 को बगदाद के एक हिस्से फालुजा में सुन्नी जनता ने 4 अमेरिकियों की हत्या कर डाली इसके जवाब में जब अमेरिकी फौजों ने फालुजा पर हमला बोला तो अल सद्र की शिया बहुल मेहदी सेना ने फालुजा के सुन्नी लड़ाकों के साथ एकजुटता जाहिर करते हुए उन्हें जरूरी सामानों की आपूर्ति की। साथ ही मेहदी सेना ने इराक के दक्षिणी शहरों कुफा, कर्बला, नजफ, सद्र सिटी में अमेरिकी फौजों पर हमला बोल दिया। इस तरह फौरी तौर पर शिया-सुन्नी मतभेद भुलाकर इराकी जनता साम्राज्यवादी कब्जे के खिलाफ खड़ी होने लगी।

फालूजा पर साम्राज्यवादी फौजों के हमले के विरोध में इराकी गवर्निंग काउंसिल के दो सदस्यों ने इस्तीफा दे दिया। अप्रैल मध्य 2004 तक अमेरिका संयुक्त राष्ट्र के 30 जून तक अस्थाई सरकार के गठन के प्रस्ताव पर सहमत हो गया। अपने ऊपर हो रहे लगातार हमलों से निपटने के लिए जहां अमेरिका ने बॉथ पार्टी के लोगों व सद्दाम की सरकार के कर्मचारियों को पुराने पदों पर बहाल करने की पहल की वहीं दूसरी ओर अल सद्र की सेना से भी समझौता करने का प्रयास किया। अमेरिकी खुफिया एजेंसी सी.आइ.ए. के करीबी रहे शिया न्यूरोलॉजिस्ट इयाद अलवी को अन्तरिम सरकार का प्रधानमंत्री नियुक्त किया गया वहीं गाजी अल-यवेर नामक सुन्नी को राष्ट्रपति पद सौंपा गया। राष्ट्रपति का पद प्रतीकात्मक महत्व का ही था। नई अंतरिम सरकार में पुरानी गवर्निंग काउंसिल के सदस्यों, सद्दाम विरोधियों, पूर्व विद्रोहियों को जगह दी गयी।

30 जून 2004 को अंतरिम सरकार के सत्तासीन होने से पूर्व ही संयुक्त राष्ट्र ने अमेरिकी फौजों को 2006 जनवरी तक इराक में बने रहने का अधिकार दे दिया। जून 2004 में ही सितम्बर 2001 के ट्विन टावर हमले की जांच के लिए गठित आयोग ने अपनी रिपोर्ट में अमेरिका के उस बहाने को भी झुठला दिया कि इराक व अलकायदा ने मिलकर अमेरिका पर हमला किया था।

2004 का अन्त आते-आते अमेरिका शिया-सुन्नी आबादी के बीच फूट के बीज बोकर अपने कब्जे को किसी तरह बरकरार रखने की नीति पर पहुंच चुका था। उसने अल सद्र के शिया लड़ाकों से समझौता किया, उन्हें सत्ता में पर्याप्त भागीदारी का आश्वासन दिया। साथ ही सुन्नी लड़ाकों पर तेजी से हमला बोलना शुरू कर दिया। सुन्नी बहुल फालूजा को एक वर्ष के भीतर दो बार साम्राज्यवादियों ने अपने हमले का निशाना बनाया।

30 जनवरी 2005 को इराक में 275 सदस्यीय राष्ट्रीय असेम्बली के चुनाव करवाये गये। रक्तरंजित इन चुनावों में अमेरिका ने लेबनान के मॉडल पर विभिन्न पंथ व राष्ट्रीयता के लिए सीटें आरक्षित कर दी थीं। सुन्नी नेताओं ने अपनी हार की आशंका के चलते चुनाव का बहिष्कार किया। चुनाव में शिया पार्टियों के गठबन्धन संयुक्त इराकी गठबंधन ने जीत हासिल कर इब्राहीम अल जफारी को प्रधानमंत्री नियुक्त किया। नयी संसद में काफी उठापटक के बाद एक सुन्नी हाजिम अल हसनी को स्पीकर व कुर्द नेता जलाल तालबानी को अप्रैल 2005 में राष्ट्रपति नियुक्त किया गया। 15 अक्टूबर 2005 को इस असेम्बली द्वारा तैयार किये गये संविधान पर जनमत संग्रह कराया गया। असेम्बली के सुन्नी सदस्य पहले ही संविधान से असहमति जता अलग हो गये थे। जनमत संग्रह में 79% वोटों से संविधान पारित हो गया पर दो सुन्नी बहुल प्रान्तों में इसे दो तिहाई बहुमत नहीं मिला। नये संविधान के आधार पर 15 दिसम्बर 2005 को संसद के चुनाव कराये गये। चुनाव में किसी पार्टी को बहुमत नहीं मिला। उम्मीद के मुताबिक शिया पार्टियों का गठबंधन सबसे बड़े दल के रूप में उभरा।

2006 के शुरुआती 4 माह सरकार के गठन पर खासी उठापटक के बाद अन्ततः शिया दवा पार्टी के नूरी अल मलीकी को प्रधानमंत्री बनाया गया। 30 दिसम्बर 2006 को सद्दाम हुसैन को फांसी पर लटका दिया गया। फरवरी 2007 में इराकी सरकार ने प्रान्तों को अपने तेल के दोहन के लिए विदेशी कम्पनियों से समझौते का अधिकार दे दिया।

2008-09 में क्रमशः मुक्तदा अल सद्र की मेहदी सेना इराक सरकार से समझौते करते हुए चुनाव प्रक्रिया में शामिल होने को तैयार होती गयी। इसी दौरान इराकी सरकार के साथ समझौता करते हुए अमेरिकी सरकार ने 2011 के अन्त तक अपनी सेनायें इराक से हटाने की घोषणा कर दी।

7 मार्च 2010 को संसद के चुनावों में 325 सदस्यीय संसद चुनी गयी। काफी जद्दोजहद के बाद मलिकी दोबारा प्रधानमंत्री बना। अगले कुछ वर्षों में अमेरिकी राष्ट्रपति बराक ओबामा ने औपचारिक तौर पर अमेरिकी सेनाओं की वापसी करानी शुरू की हालांकि अमेरिका ने अपने सैन्य अड्डों व अन्य तरीके के सैनिकों को इराक में लगातार बनाये रखा। इस तरह अमेरिकी-ब्रिटिश फौजों की औपचारिक रुखसती के बावजूद अभी भी अमेरिका का इराक में हस्तक्षेप लगातार जारी है।

इराक पर अपने कब्जे के बाद से एक भी माह ऐसा नहीं बीता जिसमें अमेरिकी सैनिक इराकी विद्रोहियों का शिकार न बनते रहे हों। कब्जे की प्रक्रिया में हताहत हुए साम्राज्यवादी सैनिकों से कई गुना सैनिक कब्जा बरकारार रखने की प्रक्रिया में मारे गये। अमेरिका के सारे फार्मूले अपनाने के बावजूद इराक में अमेरिकी साम्राज्यवादी स्थायी नियंत्रण कायम करने में अब तक विफल रहे हैं।

इस पूरे काल में अपने प्रभुत्व को कायम रखने के लिए अमेरिका अलग- अलग नीतियां अपनाता रहा। इराक को विभाजित करने से लेकर शिया, सुन्नी लड़ाकों को तोड़ने, शिया-सुन्नी में परस्पर झगड़ा तेज करने सभी विकल्पों पर उसने काम किया पर वह इराकी जनता के प्रतिरोध को नेस्तनाबूद नहीं कर पाया।

अमेरिकी कब्जे और उसकी शिया-सुन्नी झगड़े को हवा देने की नीति ने इराक में अल कायदा सरीखे संगठनों को पनपने के लिए खाद पानी सुलभ करा दिया। 2004 में ही जार्डन के अबु मुसाब अल जरकावी ने इराक में अल कायदा को स्थापित कर दिया था। 20वीं शताब्दी में अरब राष्ट्रवाद के दौर में इराक जिस हद तक धर्मनिरपेक्षता की राह पर बढ़ चला था वहां इस बात की कल्पना भी नहीं की जा सकती थी कि 21वीं सदी में सुन्नी वहाबी कट्टरपंथ अपनी जड़ें इराक में जमा लेगा। पर साम्राज्यवादी नीति ने इराक को इस मुकाम तक पहुंचा दिया। अल जरकावी ने तेजी से शिया आबादी पर हमला बोला। बाद में अल कायदा से ही निकलकर 2006 में इस्लामिक स्टेट ऑफ इराक (ISI) का गठन हुआ जो न केवल अमेरिका बल्कि शिया आबादी से भी निपटना चाहता था।

2007 आते-आते इराक बुरी तरह से शिया-सुन्नी झगड़े में फंस चुका था। सुन्नी कट्टरपंथियों का जवाब अल सद्र की मेहदी आर्मी व बद्र ब्रिगेड दे रही थी। बाद के समय में 2008-09 के दौरान मेहदी आर्मी के लड़ाके बड़े पैमाने पर नवगठित इराकी सेना में शामिल कर लिए गये। इस सेना ने न केवल अलकायदा बल्कि अन्य सुन्नी जेहादी संगठनों से निपटने में भूमिका निभानी शुरू कर दी।

2006 से 2008 के दौरान इस गृह युद्ध में औसतन 100 व्यक्ति प्रतिदिन मारे गये। बड़े पैमाने पर इराकी आबादी विस्थापित हो जार्डन व सीरिया में जाने लगी। इस गृह युद्ध का अन्त न होता देख अमेरिका ने सुन्नी लड़ाकों को तोड़ने का प्रयास किया। इसके लिए अमेरिका ने सुन्नी जनजाति नेताओं को बड़े पैमाने पर धन देकर अपनी ओर मिलाने का प्रयास किया। इस प्रक्रिया में सुन्नी अवेकनिंग (Sunni Awakening) का गठन कर उन्हें सत्ता में कुछ भागीदारी दे शान्त करने की अमेरिकी नीति थी। परन्तु प्रधानमंत्री मलिकी सुन्नी नेताओं के बड़े हिस्से को सत्ता में भागीदार बनाने में नाकाम रहा। सरकार पर अल सद्र की मेहदी सेना के प्रभाव ने भी इस काम में बाधा खड़ी की। अन्ततः 'सुन्नी अवेकनिंग' के ज्यादातर सुन्नी लड़ाके अमेरिकी धन दौलत हासिल कर पुनः इस्लामिक स्टेट ऑफ इराक व अन्य जेहादी संगठनों की ओर लौट गये। जो कुछ सुन्नी नेता इराकी सरकार के साथ बचे रहे वे भी अब सुन्नी जेहादी संगठनों का निशाना बनने लगे।

2011 में अरब जगत के जनविद्रोहों की आंच जब इराक के पड़ोसी देश सीरिया तक जा पहुंची तो अमेरिकी साम्राज्यवादियों ने इसे असद की सत्ता को ध्वस्त करने के एक मौके के रूप में लिया। जहां अमेरिका के नेतृत्व में पश्चिमी साम्राज्यवादियों ने असद की सेना से निकले कई लोगों को लेकर फ्री सीरियन आर्मी का गठन किया वहीं अपने सहयोगी सऊदी शासकों की मदद से सुन्नी कट्टरपंथी लड़ाकों को भी असद के खिलाफ मोर्चा लेने के लिए तैनात कर दिया गया।

सऊदी वहाबी शासक व अरब जगत की अन्य शेखशहियां इराक में शिया मालिकी के शासन कायम होने से खुश नहीं थे। सीरिया के बाद इराक में शिया सत्ता कायम होने से उन्हें पूरे इलाके में ईरान के प्रभाव बढ़ने का भय सता रहा था। इससे निपटने के लिए उन्होंने पहले इराक में आई.एस.आई. संगठन को बढ़ने के लिए धन मुहैय्या कराया व बाद में सीरिया में जनविद्रोह का इस्तेमाल कर अलकायदा से जुड़े सुन्नी कट्टरपंथियों को असद सरकार का तख्ता पलटने के लिए मैदान में ला दिया।

इस्लामिक स्टेट ऑफ इराक के सहयोग से जबात अल नूसरा संगठन अल कायदा की शाखा के बतौर सीरिया में असद से लड़ने के लिए कायम किया गया। अल नूसरा ने तेजी से अपने प्रभाव को बढ़ाते हुए सीरिया के सीमावर्ती इलाके पर कब्जा करना शुरू कर दिया।

2013 में इस्लामिक स्टेट ऑफ इराक (ISI) के सरगना अल बगदादी ने अपने ग्रुप का नाम बदलकर इस्लामिक स्टेट ऑफ इराक एण्ड सीरिया (ISIS) कर दिया। बगदादी ने अल नूसरा के अबु मोहम्मद अल गोलानी को अपने अधीन काम करने को कहा। यहां से अल नूसरा व इस्लामिक स्टेट में विवाद खड़ा हो गया। जहां अल नूसरा केवल असद से लड़ना चाहता था वहीं इस्लामिक स्टेट का बगदादी अब सीरिया में हासिल ताकत का इस्तेमाल कर इराक में आगे बढ़ना व खुद को खलीफा घोषित करना चाहता था। इस तरह अल नूसरा व इस्लामिक स्टेट एक दूसरे से भी संघर्षरत हो गये।

इस्लामिक स्टेट को सीरिया के तेल क्षेत्रों में कब्जे में मिली सफलता और तुर्की के जरिये तेल बिक्री से मिली दौलत ने उसे इस क्षेत्र को सबसे बड़े ग्रुप के बतौर उभरने में मदद की। 2014 की शुरुआत से इसने इराक में अपने पैर और पसारने शुरू किये। मई 2014 के इराक के चुनाव में अल मलिकी की पार्टी की जीत के बावजूद अमेरिका ने शिया-सुन्नी नेताओं की साझा सरकार बनाने के उद्देश्य से दवा पार्टी के ही दूसरे सदस्य हैद अल अबादी को सत्ता पर बैठा दिया। पर उसे भी कोई खास सफलता मिलती नहीं दिख रही है।

इस बीच जून 2014 में इस्लामिक स्टेट ऑफ सीरिया एण्ड इराक ने इराक में बड़ी सफलतायें हासिल करनी शुरू कर दीं। अल बगदादी ने पुरानी बाथ पार्टी के सदस्यों व अल नूरी की नक्शबन्दी सेना से समझौता कर मौसुल, तिकरित से समारा तक अपने कब्जे का फैलाव कर लिया। जून के अन्त तक वे अनबार व निनेवाह प्रान्त तक पहुंच चुके थे। और अब बगदाद कुछ ही दूर था।

इराक व सीरिया के तेल की बिक्री ने इस्लामिक स्टेट को संसाधन सम्पन्न संगठन बना डाला। बगदादी ने खुद को खलीफा घोषित कर अपने पांव अन्य देशों तक फैलाने के इरादे जाहिर कर दिये। इस बात से अब तक उसके समर्थन में खड़े सऊदी व अरब की अन्य शेखशाहियां भी खतरा महसूस करने लगी हैं और जॉर्डन, सऊदी अरब सबने अपनी सीमाओं पर फौजें तैनात कर इस्लामिक स्टेट को रोकने का इंतजाम शुरू कर दिया है।

इस्लामिक स्टेट के ये कट्टरपंथी शरीयत के नाम पर इराक की गैर सुन्नी आबादी पर खासकर महिलाओं-लड़कियों पर बड़े पैमाने पर अत्याचार ढा रहे हैं। कुर्द आबादी, ईसाई, शिया, याजिदी सबका उन्होंने बड़े पैमाने पर कत्लेआम अंजाम दिया है। उनकी इन कार्यवाहियों व अपने पूरे अरब में फैलने के मंसूबों ने उसे साम्राज्यवादी ताकतों, पड़ोसी देशों सबके निशाने पर ला दिया है।

इन सबके बीच चार देशों तुर्की, ईरान, सीरिया, इराक में बंटी कुर्द आबादी के अल कुर्दिस्तान का ख्वाब भी ध्वस्त हो रहा है। तुर्की तो इस सम्भावना को ही कमजोर करने के लिए इस्लामिक स्टेट की मदद करता रहा है। इस्लामिक स्टेट अपने तेल की बिक्री भी तुर्की के जरिये ही करता रहा है।

इस तरह इस्लामिक स्टेट के उदय ने फौरी तौर पर अमेरिकी, रूसी साम्राज्यवादियेां के समीकरणों को बेहद उलझा दिया है। अब हर कोई इससे निपटना चाहता है और इसके जरिये इस इलाके में अपने हित सुरक्षित करना चाहता है।

अमेरिकी शासक इस्लामिक स्टेट के सफाये के साथ सीरिया में असद की रुखसती भी चाहते हैं। रूसी साम्राज्यवादी असद की सत्ता बचाने के लिए इस्लामिक स्टेट को कमजोर बनाना चाहते हैं साथ ही वे इराक में भी कुछ हिस्सेदारी चाहते हैं। अमेरिकी साम्राज्यवादियों के नेतृत्व में कई देशों के प्रशिक्षक इराकी सेना को इस्लामिक स्टेट से निपटने के लिए प्रशिक्षित करने में जुटे हैं। ईरान भी इराक की शिया सत्ता को बचाने के लिए इराकी सेना की मदद में जुटा है। अरब की शेखशाहियां भी इस्लामिक स्टेट के बगदादी के खुद को खलीफा घोषित करने से उसके पैर पसारने की आशंका को समाप्त करने के लिए इससे निपटना चाहती हैं।

(2) सीरिया

इराक के उलट सीरिया सुन्नी बहुल देश है। यहां की आबादी में धर्म के आधार पर 87% मुस्लिम, ईसाई 10% व यहूदी 3% हैं। आबादी में 74% सुन्नी व शेष 13% अल्वी, इस्माइली व शिया हैं। जनजातीय आधार पर यहां 90% अरब व शेष 10% कुर्द, अर्मेनियाई व अन्य हैं। तेल भंडारों के मामले में यह इराक से बेहद पीछे है। हालांकि यह भी तेल व प्राकृतिक गैस का निर्यात करता है। आजकल इसका महत्व इसकी प्राकृतिक सम्पदा के अलावा प्राकृतिक गैस पाइप लाइन के मार्ग में पड़ने के चलते खासा बढ़ गया है।

प्रथम विश्व युद्ध के बाद ऑटोमन साम्राज्य के पतन के बाद सीरिया फ्रांसीसी साम्राज्यवादियों के हिस्से में आया था। फ्रांस से मुक्ति के लिए सीरिया की जनता शीघ्र ही संघर्ष करने लगी। 1922 में फ्रांसीसियों ने सीरिया को धर्म के आधार पर तीन स्वायत्त इलाकों में बांट दिया जिसमें अलवी लोगों को तटीय व यहूदी लोगों को दक्षिणी इलाका प्राप्त हुआ।

1928 में भारी जनदबाव में फ्रांसीसी साम्राज्यवादियों को संविधान सभा के चुनाव कराने को मजबूर होना पड़ा। हालांकि बाद में फ्रांस ने इस सभा को खारिज कर दिया। 1936 में फ्रांस सीरिया को कुछ इस तरह की स्वतंत्रता देने को सहमत हुआ जिसमें फ्रांसीसी सेना वहां बनी रहे व फ्रांस के आर्थिक हित प्राथमिकता लिए रहें।

द्वितीय विश्व युद्ध के दौरान संक्षिप्त समय के लिए सीरिया जर्मन साम्राज्यवादियों के नियंत्रण में आया पर शीघ्र ही फ्रांसीसी-ब्रिटिश सेनाओं ने सीरिया पर कब्जा कर लिया। 1941 में हालांकि सीरिया को स्वतंत्र घोषित कर दिया गया पर फ्रांसीसी फौज वहां बनी रहीं। 1943 में शुकी अल-कुवातली सीरिया के राष्ट्रपति चुने गये। अप्रैल 1946 तक फ्रांसीसी सेनायें सीरिया से चली गयी।

1948-49 में सीरिया ने अरब लीग का सदस्य होने के चलते अरब-इस्राइल युद्ध में हिस्सा लिया। इस युद्ध में इस्राइल के हाथों हार ने सीरिया में सरकार के प्रति असंतोष को बढ़ा दिया। जिसके चलते 1949 में तीन बार तख्तापलट के प्रयास हुए। अन्तिम तौर पर 1949 के अन्त में सत्ता पर मदीब अल-शिशकली ने नियंत्रण कायम किया जिसने 1954 तक शासन किया। 1950 में नया संविधान तैयार किया गया। पर 1951 के अन्त में इस संविधान के आधार पर बनी संसदीय सरकार को निलंबित कर दिया गया और 1954 तक शिशकली ने एक तानाशाह की तरह शासन किया। 1953 में उसने नया संविधान जिसमें सरकार की राष्ट्रपति प्रणाली घोषित की गयी थी, को लागू किया और खुद राष्ट्रपति बन बैठा।

1954 में शिशकली का पतन हो गया और 1950 का संविधान पुनः लागू किया गया। 1954 में चुनाव के बाद एक संयुक्त सरकार में शुकीरी अल-कुवातली को राष्ट्रपति चुना गया। इस सरकार में बॉथ पार्टी भी शामिल थी। 1950 के दशक की शुरुआत से ही बॉथ पार्टी, जो अरब राष्ट्रवाद व समाजवाद की बातें करती थी, तेजी से लोकप्रिय होती गयी और सीरिया की मुख्य राजनीतिक ताकत बन गयी। इसी समय मध्य एशिया में पश्चिमी साम्राज्यवादियों का प्रभाव बढ़ाने के प्रयासों में 1955 में बगदाद पैक्ट के तहत सैण्टो कायम किया गया। मिश्र व सीरिया दोनों ने इसके खिलाफ सोवियत संघ से सैन्य समझौते किये।

1958 से 1961 के बीच सीरिया व मिश्र ने संयुक्त अरब गणतंत्र में एक होकर काम किया। 1961में सीरियाई सेना के अफसरों के एक धड़े ने सीरिया पर नियंत्रण कायम करते हुए सीरिया को संयुक्त अरब गणतंत्र से बाहर करने की घोषणा कर दी। 1963 में बॉथ पार्टी एक तख्तापलट के जरिये सत्ता में आयी। बॉथ पार्टी का पहले मध्यमार्गी धड़ा सत्तासीन हुआ पर 1966 तक आते-आते इसके रेडिकल धड़े के हाथ सत्ता आयी और नुरुद्दीन अल-अन्तासी राष्ट्रपति बन गया। नयी सरकार ने मिश्र व सोवियत संघ से सम्बन्ध मजबूत किये।

1967 के अरब-इस्राइल युद्ध में सीरिया की गोलन पहाड़ियों पर इस्राइल ने कब्जा कर लिया। युद्ध के दौरान बॉथ पार्टी अन्तासी के नेतृत्व में 'प्रगतिशील' व जनरल हाफिज अल-असद के नेतृत्व में 'राष्ट्रवादी' हिस्सों में बंट गयी। पहला हिस्सा सोवियत संघ से निकटता चाहता था तो दूसरा सीरिया को सोवियत संघ के प्रभाव से मुक्त करना चाहता था।

नवम्बर 1970 में अल असद ने अल अन्तासी को सत्ता से बाहर कर दिया। इस तरह असद के साम्राज्य की शुरुआत हुई। अल-असद लगातार अगले 3 बार राष्ट्रपति चुना गया। 1973 में नया संविधान पारित हुआ। अल असद ने सोवियत संघ से मजबूत संबंध बनाये रखे। शियाओं की एक शाखा अलवी से आने के चलते अल असद ने सत्ता व सेना में अलवी लोगों की दखलंदाजी व नियुक्ति को बढ़ावा दिया।

1973 में अरब-इस्राइल युद्ध के दौरान गोलन पहाड़ियां एक बफर जोन के रूप में संयुक्त राष्ट्र की सेनाओं के नियंत्रण में आ गयी। लेबनान में गृहयुद्ध के दौरान 1976 में शान्ति सेना के रूप में सीरियाई सेना वहां गयी।

80 का दशक का अन्त आते-आते सोवियत संघ की कमजोर होती स्थिति के चलते सीरियाई सरकार ने पश्चिमी साम्राज्यवादियों से अपने सम्बन्ध सुधारने की शुरुआत की। इराक द्वारा कुवैत पर कब्जे की निन्दा करने वालों में सीरिया पहला अरब देश था। इराक पर हमले के लिए गठबन्धन सेना में सीरिया ने 20000 सैनिकों को भेजा।

इसी के साथ 1991 से सीरिया ने इस्राइल से वार्ता शुरू कर दी। सीरिया इस्राइल से समझौता कर गोलन पहाड़ियों पर दोबारा नियंत्रण चाहता है। जून 2000 में असद की मृत्यु के पश्चात उसका पुत्र बशर अल असद राष्ट्रपति बना। उसने तेजी से उदारीकरण की नीतियां लागू करने की ओर कदम बढ़ाये। पर सत्ता पर अपना एकाधिकार उसने कमजोर नहीं किया।

2003 में जब अमेरिका ने इराक पर दोबारा हमला बोला तो सीरिया इसके खिलाफ खड़ा हुआ। अमेरिका ने तभी से सीरिया को इराकी विद्रोहियों के मददगार के रूप में प्रचारित करना व इस पर दबाव कायम करना शुरू कर दिया। राजनैतिक सुधारों को लागू करने के दबावों के बीच 2003 में बशर अल असद ने कुछ आर्थिक राजनैतिक सुधारों की ओर कदम बढ़ाये। पर अमेरिकी साम्राज्यवादियों को खुश करने के लिए ये सुधार नाकाफी थे और उनकी निगाहें सीरिया के प्रति टेढ़ी बनी रहीं।

अक्टूबर 2003 में इस्राइल ने सीरिया पर यह कहते हुए बमबारी की कि वहां से इस्राइल पर आत्मघाती हमले कराये जा रहे हैं। 2003 में लेबनान में सीरिया के प्रभाव के विरोधी रहे प्रधानमंत्री हारिरी की हत्या कर दी गयी। इस हत्या के लिए सीरिया को जिम्मेदार मानते हुए लेबनान में सीरिया विरोधी प्रदर्शन शुरू हो गये अंततः सीरिया को लेबनान से अपनी फौजें हटानी पड़ीं।

हारिरी की हत्या को बहाने के बतौर इस्तेमाल करते हुए पश्चिमी साम्राज्यवादियों ने सीरिया पर संयुक्त राष्ट्र के माध्यम से दबाव बढ़ा दिया। हत्या की जांच के बहाने असद को घेरने की निरन्तर कोशिशें की गयीं। साथ ही हिजबुल्ला लड़ाकों को भी इसी बहाने से साधने की साम्राज्यवादियों ने कोशिशें जारी रखीं। पर जांच कर्ता दल हत्या में सीरियाई हाथ खोजने में नाकाम रहा।

बशर अल असद 2007 के चुनावों में फिर राष्ट्रपति चुन लिया गया, चुनाव में वह अकेला प्रत्याशी था। अब सीरिया को घेरने के बहाने के बतौर साम्राज्यवादियों ने नाभिकीय हथियारों के सीरिया के पास होने का राग अलापना शुरू किया। अन्तर्राष्ट्रीय परमाणु ऊर्जा एजेंसी के जांचकर्ता सीरिया के परमाणु कार्यक्रम की जांच के लिए पहुंच गये।

मई 2008 में अमेरिका ने इराक के विद्रोहियों के सीरिया में छिपे होने का हवाला देते हुए सीरिया पर हमला बोलने का प्रयास किया। अमेरिका की इस कार्यवाही के खिलाफ सीरिया में बड़े पैमाने पर अमेरिका विरोधी प्रदर्शन फूट पड़े।

इस तरह बशर अल असद के नवउदारवादी कदमों के बावजूद 2003 से ही पश्चिमी साम्राज्यवादी सीरिया की असद सरकार को अस्थिर करने के लिए प्रयासरत रहे। सीरिया में रूस का सैन्य अड्डा होने व रूस के सीरिया के पक्ष में आ डटने की आशंका ने उन्हें सीरिया पर सीधे हमला बोलने से तो रोके रखा पर प्रकारान्तर से वे असद सरकार को घेरने के हर सम्भव प्रयास करते रहे। ईरान को घेरने की अमेरिकी साम्राज्यवादी नीति के मद्देनजर भी उनके लिए यह जरूरी था कि पहले इराक व सीरिया में अपनी स्थिति मजबूत कर ली जाय। अमेरिका की नयी सदी की परियोजना उसकी चौतरफा प्रभुत्व कायम करने की चाहत को अभिव्यक्त करती रही है।

2011 में जब ट्यूनीशिया-मिस्र में जनविद्रोह फूट पड़े तो इसकी आंच से सीरिया भी अछूता नहीं रहा। तानाशाह असद के खिलाफ जनता सड़कों पर आ डटी। पहले तो असद सरकार ने कुछ रियायतों की घोषणा कर प्रदर्शनकारियों को शान्त करना चाहा। उसने हजारों कुर्द लोगों को नागरिकता दिये जाने की घोषणा की। 48 वर्ष से चले आ रहे आपातकाल को समाप्त घोषित कर दिया, कुछ राजनैतिक दलों को काम करने की छूट दी। पर जब इन कदमों से भी जनता शान्त नहीं हुई तो असद ने क्रूरतापूर्वक प्रदर्शनों को कुचलना शुरू कर दिया। इसके साथ ही जनता को आपस में बांटने के लिए सुन्नी-अलवी विवाद को भी उसने हवा देना शुरू कर दिया।

इसके लिए बशर अल-असद ने जेलों में बन्द कई सुन्नी कट्टरपंथी नेताओं को रिहा कर दिया ताकि वे अलवी सम्प्रदाय के लोगों पर हमला बोलें और अल्पसंख्यक अलवी असद के इर्द-गिर्द संगठित हो जायें और फिर इन सुन्नी कट्टरपंथियों पर सेना के द्वारा हमला बोला जा सके।

जहां एक ओर असद सरकार अपने खिलाफ उठे विरोध प्रदर्शनों को साम्प्रदायिक रूप दे कुचलने पर उतारू थी वहीं दूसरी ओर अमेरिकी साम्राज्यवादी व सऊदी शासक भी इस मौके का लाभ उठा असद को गद्दी से हटाना चाहते थे। इसके लिए उन्होंने जहां एक ओर असद सेना से निकाले गये लोगों को लेकर फ्री सीरियन आर्मी का गठन किया वहीं दूसरी ओर अल कायदा से जुड़े सुन्नी लड़ाकों को भी असद के खिलाफ मैदान में ला खड़ा किया।

असद द्वारा जनता के दमन का हवाला देते हुए सीरिया की अरब लीग से सदस्यता निलंबित कर दी गयी। सीरिया पर पश्चिमी साम्राज्यवादियों की शह पर तमाम प्रतिबंध थोप दिये गये। साम्राज्यवादियों व अरब के शेखों ने जनविद्रोह को गृहयुद्ध में तब्दील कर डाला।

अल कायदा से जुड़े तमाम संगठनों को असद के खिलाफ ला खड़ा करने से सीरियाई जनता की स्थिति और गंभीर हो गयी है एक ओर वो अल नूसरा व इस्लामिक स्टेट के कहर को झेल रही है तो दूसरी ओर असद की सेना के कहर को।

इस पूरी स्थिति का लाभ इस्लामिक स्टेट के अल बगदादी ने उठाया और सीरिया में तेजी से पैर पसारने शुरू कर दिये। इराक में उसे हासिल हुई सफलता ने उसे तात्कालिक तौर पर इस इलाके के सबसे बड़े जेहादी संगठन के तौर पर स्थापित कर दिया।

अमेरिका इराक में अपनी इस नाजायज सन्तान के प्रवेश से चिन्तित है और इससे निपटना चाहता है पर सीरिया में वो अल कायदा से जुड़े दूसरे संगठनों को पाल-पोस कर असद से भी निपटना चाहता है। अमेरिकी साम्राज्यवादी एक समय तो सीरिया पर सीधे हमला बोलने का मन बना चुके थे पर रूसी साम्राज्यवादियों के असद के समर्थन में आ डटने से उन्हें कदम पीछे खींचने पड़े।

सीरिया के कुर्द लड़ाके इस सबके बीच अपने स्वतंत्र राज्य के लिए संघर्षरत हैं पर इस्लामिक स्टेट व असद के बीच उनकी मांग प्रभावी नहीं बन पा रही है।

जैसा कि शुरुआत में ही कहा गया है कि सीरिया का महत्व तेल संसाधनों से अधिक आज इस बात के लिए है कि प्राकृतिक गैस पाइप लाइनें सीरिया से गुजर कर जानी हैं। ऊर्जा के वैकल्पिक स्रोत के रूप में प्राकृतिक गैस का महत्व अधिकाधिक बढ़ता जा रहा है। इसकी आपूर्ति के लिए बिछायी जाने वाली पाइप लाइनें साम्राज्यवादियों व अरब मुल्कों के आपसी संघर्ष का नया एजेण्डा बन चुकी हैं। फारस की खाड़ी में कतर और ईरान के बीच प्राकृतिक गैस का बड़ा भण्डार है कतर में अमेरिकी सैन्य अड्डा मौजूद है। ईरान-इराक-सीरिया पाइप लाइन जिसको बाद में समुद्री रास्ते तक ग्रीस तक ले जाने की योजना को ईरान व सीरिया के मौजूदा शासक आगे बढ़ाते रहे हैं। इसकी जगह यूरोपीय साम्राज्यवादी तुर्की की सीमा से होते हुए इराक-अजरबैजान-तुर्कमेनिस्तान पाइप लाइन की वकालत करते रहे हैं। अमेरिकी साम्राज्यवादी एक विस्तृत योजना पर विचाररत हैं जिसके तहत कतर-सऊदी अरब-जॉर्डन-सीरिया पाइप लाइन बिछायी जाये। सीरिया के होम्स में यह तीन हिस्सों में बंट कर लाटविया, लेबनान व तुर्की की ओर जाये। अमेरिका के इस भारी भरकम प्रोजेक्ट के लिए भी जरूरी है कि सीरिया असद के नियंत्रण से निकलकर अमेरिका के प्रभाव में आ जाये।

लीबिया में गद्दाफी के खिलाफ जिस तरह इस्लामिक जेहादी संगठनों को पाल-पोस कर गद्दाफी को मौत के घाट उतारने में साम्राज्यवादियों को सफलता मिल गयी थी उसी कहानी को पिछले वर्षों में वे सीरिया में भी दोहराने में जुटे हैं। पर असद के पक्ष में खड़े रूसी साम्राज्यवादियों के चलते पश्चिमी साम्राज्यवादी सीरिया में अपने मन की नहीं कर पा रहे हैं।

सीरिया में सत्ता व प्रशासन में अल्पसंख्यक अलवी लोगों के वर्चस्व ने सुन्नी बहुसंख्यकों को अलगाव में डाला है जिसके चलते सुन्नी कट्टरपंथी संगठनों का यहां पर तेजी से आधार कायम हुआ। असद ने इन संगठनों का निरन्तर दमन किया। इन संगठनों के यहां पनपने में सऊदी अरब की शेखशाहियां लगातार मददगार रही हैं।

× × × ×

इराक व सीरिया के उपरोक्त ऐतिहासिक विवरण से स्पष्ट है कि ऑटोमन साम्राज्य के अधीन रहे ये दोनों देश प्रथम विश्व युद्ध के पश्चात ब्रिटिश-फ्रांसीसी साम्राज्यवादियों के चंगुल में आ गये। द्वितीय विश्व युद्ध के दौरान वैश्विक स्तर पर समाजवाद व राष्ट्रीय मुक्ति युद्धों की लहर ने इन देशों में भी राष्ट्रवादी आंदोलन को पैदा किया और इन दोनों ही देशों ने साम्राज्यवाद की प्रत्यक्ष गुलामी से मुक्ति की ओर क्रमशः कदम बढ़ाये।

अमेरिकी साम्राज्यवादी इस समूचे इलाके पर अपना प्रभुत्व कायम करने के लिए द्वितीय विश्व युद्ध के बाद से लगातार सक्रिय रहे हैं। इजरायल के रूप में अरब जगत में उन्हें अपना सबसे विश्वस्त सहयोगी हासिल हुआ। अमेरिका ने इजरायल को भरपूर सैनिक-आर्थिक मदद मुहैय्या करा कर इजरायली शासकों के हर कुकर्म में उनका साथ दिया। इजरायली शासक अमेरिकी साम्राज्यवादियों की शह पर अपनी खुली मनमानी करते रहे। उन्होंने एक तरह से अधिकांश फिलिस्तीन को हड़प लिया, लेबनान, सीरिया के कई हिस्से कब्जा लिये। वह जब तब लेबनान, सीरिया पर बमबारी करता रहा है पर अमेरिकी वीटो के चलते संयुक्त राष्ट्र उसके खिलाफ एक प्रस्ताव तक पास नहीं कर पाया। इजरायल इस पूरे इलाके में अमेरिकी चौधराहट को बनाये रखने का प्रमुख जरिया रहा है

इसके साथ ही अमेरिका के नेतृत्व में पश्चिमी साम्राज्यवादियों ने अरब जगत की शेख शाहियों खासकर सऊदी अरब के शासकों को निरन्तर शह दी इनका उपयोग अरब राष्ट्रवाद व कम्युनिस्ट खतरे को कमजोर करने के लिए मुस्लिम कट्टरपंथ को बढ़ावा देने में किया गया। इसके लिए वहाबी-सलाफी कट्टरपंथ को सऊदी शासकों के सहयोग से मजबूत बना पूरे अरब जगत में फैलाने के प्रयास किये गये।

ब्रिटिश-फ्रांसीसी कब्जे से मुक्ति के पश्चात इन देशों की दिशा स्पष्टतया धर्म निरपेक्षता की ओर थी। अरब राष्ट्रवाद के झण्डे तले यहां के पूंजीवादी शासकों ने अपने अपने यहां पूंजीवादी विकास को अंजाम दिया। किसी हद तक अंतर साम्राज्यवादी प्रतिस्पर्धा का इन्होंने लाभ भी उठाया। परन्तु 80 का दशक आते-आते इन शासकों ने नवउदारवादी नीतियों को क्रमशः लागू करने व पश्चिमी साम्राज्यवादियों से सम्बन्धों को नये सिरे से परिभाषित करना भी शुरू किया। 80 के दशक में इराक तो 90 के दशक की शुरुआत में सीरिया पश्चिमी साम्राज्यवादियों के खासे करीब आ चुके थे।

पर अमेरिका के नेतृत्व में पश्चिमी साम्राज्यवादी इराक-सीरिया से पूर्ण आत्म समर्पण की उम्मीद लगाये बैठे थे जिसके लिए इन देशों के शासक तैयार नहीं थे। साथ ही पश्चिमी साम्राज्यवादियों को सोवियत संघ के विघटन के बाद पश्चिम एशिया में अपनी सैन्य मौजूदगी बढ़ाने की संभावना ने भी उन्हें इन देशों के शासकों को निशाने पर लेने की ओर ढकेला।

अपने सैन्य हस्तक्षेप को जायज ठहराने के लिए पश्चिमी साम्राज्यवादियों ने इराक व सीरिया के खिलाफ एक के बाद एक झूठे मनगढ़न्त आरोप लगाये और उन्हें खतरनाक हथियारों का उत्पादक और आतंकवाद को प्रश्रय देने वाले देशों के रूप में प्रचारित करना शुरू कर दिया।

समाजवाद व अरब राष्ट्रवाद को पीछे ढकेलने के लिए इस्लामिक कट्टरपंथ को बढ़ावा देना अमेरिकी साम्राज्यवादियों की पुरानी नीति रही है। मिस्र में मुस्लिम ब्रदरहुड को खड़ा करने से लेकर फिलिस्तीन में हमास, सऊदी अरब व अन्य शेखशाही वाले देशों में सलाफी व वहाबी कट्टरपंथ को बढ़ावा देने और अन्ततः अफगानिस्तान में तालिबान, अलकायदा को खड़ा करने में हर जगह साम्राज्यवादी अपनी भूमिका निभाते रहे हैं।

जब जब साम्राज्यवादियों द्वारा खड़े किये गये कट्टरपंथी संगठन उसके नियंत्रण से बाहर होते रहे तो साम्राज्यवादी 'आतंक के खिलाफ युद्ध' के नाम पर उन्हें भी निशाने पर लेते रहे। अफगानिस्तान के तालिबानी शासन पर अमेरिकी हमला इसका एक उदाहरण है।

परन्तु अपने इस्तेमाल के लिए इस्लामिक कट्टरपंथियों को पालने पोसने की अपनी नीति को पश्चिमी साम्राज्यवादी बदस्तूर जारी रखे हैं। साम्राज्यवाद की इस नीति का ही परिणाम है कि कभी धर्म निरपेक्षता की ओर कदम बढ़ा चुके इराक-सीरिया फिर से इस्लामिक कट्टरपंथ व साम्प्रदायिक संघर्षों की चपेट में आ चुके हैं।

सीरिया में असद सरकार को अस्थिर बनाने के लिए पाला पोसा गया इस्लामिक स्टेट अब इराक में लगातार अपने पैर पसार एक भस्मासुर बन चुका है। यह इराक व सीरिया में बर्बर हमले कर रहा है। इसके नेता अल बगदादी ने खुद को खलीफा घोषित कर दिया है। इस तरह पश्चिमी साम्राज्यवादियों ने 'आतंक के खिलाफ युद्ध' का नया मोहरा खड़ा कर लिया है।

इराक व सीरिया में वहां के घरेलू पूंजीवादी शासक, वहां के इस्लामिक जेहादी और साम्राज्यवादी ताकतें तीनों ही जनता के खिलाफ खड़ी हैं। इन देशों में इन तीनों की मुखालफत करते हुए शिया सुन्नी मेहनतकशों की एकता कायम किये जाने की जरूरत है। कम्युनिस्ट क्रांतिकारी पार्टी की गैरमौजूदगी इन देशों की जनता को एक ओर कुआँ एक ओर खाई की स्थिति में ढकेले हुए है।

पूरी दुनिया की तरह इराक व सीरिया भी विश्व आर्थिक संकट की मार से अछूते नहीं हैं। इस संकट के साथ तेल की गिरती कीमतों ने यहां की जनता की बदहाली को बढ़ाया है यह बदहाली ही अरब जगत के युवाओं-मेहनतकशों को जहां एक ओर अधिकाधिक जन विद्रोहों के मुट्ठी ताने लोगों की दिशा में बढ़ा रही है तो साथ ही इस्लामिक स्टेट सरीखे कट्टरपंथी संगठनों के चंगुल में भी धकेल रही है।

देर सबेर इराक व सीरिया की मेहनतकश जनता आपसी साम्प्रदायिक विभाजन को पीछे ढकेल अपने खिलाफ खड़ी उपरोक्त तीनों ताकतों को अपने एजेण्डे पर लेगी। वैसे भी साम्राज्यवादी अपनी सारी तीन तिकड़मों के बावजूद यहां अपनी मन की कर पाने में कुछ खास सफल नहीं हुए हैं।

■■■